Gyanvividha, Vol.-3; Issue-2 (Apr.-June) 2026 : PP-288-293

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-6.125
Vol.-3; Issue-2 (Apr.-June) 2026
Page No.- 288-293
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

डॉ. गुलाब सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र विभाग,
राम सकल सिंह साइंस कालेज, डुमरा,
सीतामढ़ी, बिहार.

Corresponding Author :

डॉ. गुलाब सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र विभाग,
राम सकल सिंह साइंस कालेज, डुमरा,
सीतामढ़ी, बिहार.

सांख्य-दर्शन की द्वैतता (पुरुष-प्रकृति) और पर्यावरण-नैतिकता : पर्यावरण संरक्षण हेतु दार्शनिक आधारों की पुनर्व्याख्या

सारांश : प्रस्तुत शोधपत्र भारतीय आस्तिक दर्शन की प्राचीनतम परंपराओं में से एक, सांख्य दर्शन के मौलिक सिद्धांतों, विशेषकर पुरुष (चेतना) और प्रकृति (जड़ तत्त्व) के द्वैत के आलोक में समकालीन पर्यावरण-नैतिकता की विस्तृत और गहन पुनर्व्याख्या प्रस्तुत करता है। वर्तमान समय का पारिस्थितिक संकट केवल तकनीकी या वैज्ञानिक नीतियों की विफलता नहीं है, अपितु यह मनुष्य के अहंकार और प्रकृति के प्रति उसके उपभोगवादी दृष्टिकोण का परिणाम है। यह शोधपत्र विश्लेषित करता है कि किस प्रकार सांख्य दर्शन का 'त्रिगुण सिद्धांत' (सत्त्व, रजस, तमस), 'सत्कार्यवाद' और 'विवेकज्ञान' पर्यावरण संरक्षण के लिए एक सुदृढ़ दार्शनिक एवं नैतिक आधार प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त प्रस्तुत अध्ययन, आधुनिक 'गहन पारिस्थितिकी' (डीप इकोलॉजी) और वंदना शिवा द्वारा प्रतिपादित 'पारिस्थितिक नारीवाद' (इकोफेमिनिज़्म) के परिप्रेक्ष्य में सांख्य की प्रासंगिकता को उद्घाटित करता है। साथ ही, रमेशचन्द्र शाह के प्रसिद्ध उपन्यास 'गोबरगणेश' (1978) तथा अन्य प्रासंगिक साहित्यिक रचनाओं में अन्तर्निहित प्रकृति-पुरुष दर्शन का समीक्षात्मक विश्लेषण कर यह स्थापित करने का प्रयास करता है कि सांख्य का विवेकज्ञान, मानव और प्रकृति के मध्य शोषण के स्थान पर 'सह-अस्तित्व' और 'संतुलन' की अनिवार्यता को सिद्ध करता हुआ प्रतीत होता है। सांख्य दर्शन का यह तात्त्विक विवेचन आधुनिक पर्यावरण-नैतिकता को एक सुदृढ़ और समग्र दृष्टिकोण प्रदान करता है।

कूट शब्द : सांख्य दर्शन, पुरुष-प्रकृति द्वैतता, पर्यावरण-नैतिकता, त्रिगुण सिद्धांत, गहन पारिस्थितिकी, पारिस्थितिक नारीवाद, सांख्य-कारिका, विवेकज्ञान, सतत विकास।

1. परिचय : इक्कीसवीं सदी में मानवता एक अभूतपूर्व और भयावह पर्यावरणीय संकट के मुहाने पर खड़ी है, जहाँ औद्योगिकीकरण, अनियंत्रित शहरीकरण और अंधाधुंध उपभोक्तावादी संस्कृति ने प्राकृतिक

संसाधनों के अतिदोहन को जन्म दिया है (श्रोत्रिय, 2025)। पश्चिमी भौतिकवादी प्रतिमानों ने प्रकृति को केवल एक 'संसाधन' और 'भोग की वस्तु' मानकर जो विकास की रूपरेखा रची है, उसने पृथ्वी के पारिस्थितिक संतुलन को गंभीर क्षति पहुँचाई है (दवे, 2025)। इस संकट के स्थायी समाधान हेतु केवल तकनीकी या राजनीतिक उपाय पर्याप्त नहीं प्रतीत होते, बल्कि मानव चेतना में एक आमूलचूल दार्शनिक और नैतिक परिवर्तन की महती आवश्यकता है (बघेल, 2019)।

भारतीय दर्शन की सुदीर्घ परंपरा में प्रकृति को कभी भी जड़ या केवल उपभोग की निर्जीव वस्तु नहीं माना गया है; इसे जीवन का मूलाधार, ब्रह्मांडीय शक्ति और सहचर के रूप में स्वीकार किया गया है (रेणुकादेवी, 2012)। इस संदर्भ में महर्षि कपिल द्वारा प्रवर्तित और ईश्वरकृष्ण (लगभग 350 ईसवी) द्वारा 'सांख्यकारिका' में संहिताबद्ध 'सांख्य दर्शन' एक विशिष्ट और वैज्ञानिक स्थान रखता है (ईश्वरकृष्ण, 2023)। सांख्य दर्शन स्पष्ट रूप से दो स्वतंत्र और शाश्वत सत्ताओं—'पुरुष' (शुद्ध चेतना) और 'प्रकृति' (मूल कारण) के द्वैत को स्वीकार करता है (मिश्र, 1940)। प्रस्तुत शोधपत्र इसी परिकल्पना पर आधारित है कि सांख्य का यह तात्त्विक विश्लेषण (जहाँ प्रकृति को समस्त ब्रह्मांड की निर्मात्री और पुरुष को एक तटस्थ द्रष्टा माना गया है) मानव को उसके अज्ञान (अविवेक) से मुक्त कर एक उच्च कोटि की पर्यावरण-नैतिकता की ओर ले जा सकता है (तिमलसिना, 2022)।

2. चर्चा एंव विश्लेषण-

(क) सांख्य-दर्शन की तात्त्विक रुपरेखा: पुरुष और प्रकृति का स्वरुप : सांख्य दर्शन के ब्रह्मांड विज्ञान का मूल आधार पच्चीस तत्त्वों की विशद मीमांसा है, जो पुरुष और प्रकृति की अंतर्क्रिया से उत्पन्न होते हैं (मिश्र, 1940)। सांख्य के अनुसार, 'पुरुष' एक शुद्ध, निर्गुण, निष्क्रिय और चेतन तत्त्व है, जो केवल द्रष्टा (साक्षी) है, जबकि 'प्रकृति' जड़ होते हुए भी अत्यंत सूक्ष्म, सक्रिय और संपूर्ण सृष्टि का मूल कारण है (बघेल, 2019)। सांख्य दर्शन में प्रकृति से उत्पन्न होने वाले तत्त्वों का वर्गीकरण, पर्यावरण और मानव शरीर के अंतर्संबंध को अत्यंत वैज्ञानिक ढंग से स्पष्ट करता है (रविकांत, 2021) ।

तत्त्व का प्रकार	सांख्य दर्शन के अनुसार तत्त्वों की सूची	पर्यावरणीय एवं मानवीय अंतर्संबंध
मूल सत्ताएँ (2)	पुरुष (चेतना) और प्रकृति (जड़/मूल कारण)	मानव की आंतरिक चेतना और बाह्य प्राकृतिक पर्यावरण का आधार।
अंतःकरण (3)	महत (बुद्धि), अहंकार, मन	मानवीय संवेदनाओं, तार्किकता और पर्यावरण के प्रति दृष्टिकोण का निर्माण।
ज्ञानेन्द्रियाँ (5)	नेत्र, कर्ण, नासिका, जिह्वा, त्वचा	बाह्य प्रकृति (रूप, रस, गंध आदि) को ग्रहण करने के साधन।
कर्मेन्द्रियाँ (5)	वाक्, पाणि (हाथ), पाद (पैर), पायु, उपस्थ	पर्यावरण में मानवीय कर्म और भौतिक हस्तक्षेप के साधन।
तन्मात्राएँ (5)	शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध	पंचमहाभूतों के सूक्ष्म रूप, जो पर्यावरण की गुणवत्ता निर्धारित करते हैं।
पंचमहाभूत (5)	आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी	संपूर्ण भौतिक पर्यावरण और पारिस्थितिक तंत्र का दृश्य व स्थूल स्वरूप।

सांख्य दर्शन में प्रकृति और पुरुष का संयोग सृष्टि की उत्पत्ति का कारण माना गया है (भट्टाचार्य, 2023)। ईश्वरकृष्ण की सांख्यकारिका में इस संयोग को 'पंगु-अंध न्याय' (लंगड़े और अंधे व्यक्ति के दृष्टांत) के माध्यम से समझाया गया है (ईश्वरकृष्ण, 2023)। जिस प्रकार एक अंधा व्यक्ति (प्रकृति, जो सक्रिय है परंतु दिशाहीन है) और

एक लंगड़ा व्यक्ति (पुरुष, जो देख सकता है परंतु चल नहीं सकता) लक्ष्य की प्राप्ति के लिए एक-दूसरे का सहयोग करते हैं, उसी प्रकार प्रकृति और पुरुष का संयोग सृष्टि के विकास और अंततः पुरुष के कैवल्य (मोक्ष) के लिए होता है (मिश्र, 1940)। पर्यावरणीय दृष्टिकोण से यह सिद्धांत अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि यह उद्घोष करता है कि मनुष्य (पुरुष की चेतना से युक्त) और पर्यावरण (प्रकृति) परस्पर अन्योन्याश्रित हैं (अमेटा, 2025)। यदि मनुष्य अपने स्वार्थवश प्रकृति को पंगु बनाने का प्रयास करेगा, तो वह स्वयं की चेतना और अपने अस्तित्व की गतिशीलता को ही नष्ट कर देगा (राधाकृष्णन, 1987)।

(ख) पर्यावरण-नैतिकता और त्रिगुण सिद्धांत का अंतर्संबंध : सांख्य दर्शन का 'त्रिगुण सिद्धांत' मानवीय व्यवहार और पर्यावरणीय गिरावट के मनोवैज्ञानिक कारणों की अत्यंत सूक्ष्म व्याख्या प्रस्तुत करता है (बघेल, 2019)। प्रकृति तीन गुणों की साम्यावस्था का नाम है- सत्त्व (प्रकाश, सद्भाव और ज्ञान), रजस (गति, लालसा और कर्म), और तमस (अंधकार, जड़ता और अज्ञान) (मिश्र, 1940)। जब तक ये गुण साम्यावस्था में रहते हैं, प्रकृति शांत और सृजनात्मक रहती है, परंतु जब पुरुष का संपर्क प्रकृति से होता है, तो गुणों में विषमता उत्पन्न होती है जिससे सृष्टि का चक्र प्रारंभ होता है (ईश्वरकृष्ण, 2023) ।

वर्तमान पर्यावरणीय संकट मूलतः मानवीय व्यवहार में 'रजस' और 'तमस' गुणों की प्रधानता का ही प्रत्यक्ष परिणाम है (श्रोत्रिय, 2025)। मनुष्य के भीतर जब असीमित लालसा, महत्त्वाकांक्षा और उपभोग की प्रवृत्ति (रजस) बढ़ती है, और जब वह प्रकृति के दूरगामी महत्व को समझने में अपनी अज्ञानता व प्रमाद (तमस) का प्रदर्शन करता है, तो वह प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध और अविवेकपूर्ण दोहन करने लगता है (बघेल, 2019)। अज्ञान (अविद्या) और अहंकार के कारण मनुष्य स्वयं को प्रकृति का निर्विवाद स्वामी मान बैठता है (दवे, 2025)। इसके विपरीत, जब मनुष्य में 'सत्त्व' गुण का उत्कर्ष होता है, तब उसमें 'विवेकज्ञान' का उदय होता है। विवेकज्ञान के जाग्रत होने पर वह यह समझने लगता है कि प्रकृति का अंधाधुंध दोहन 'आत्मघाती' है (श्रोत्रिय, 2025)। पर्यावरण-नैतिकता की दृष्टि से सांख्य दर्शन यह शिक्षा देता है कि हमें शोषण के स्थान पर संरक्षण और अनियंत्रित उपभोग के स्थान पर आवश्यकता-आधारित जीवन शैली (सत्त्व गुण) को अपनाना चाहिए (रविकांत, 2021)।

(ग) गहन पारिस्थितिकी (डीप इकोलॉजी) और सांख्य का तादात्म्य : आधुनिक पर्यावरणीय दर्शन में अर्ने नेस (1973) द्वारा प्रतिपादित 'गहन पारिस्थितिकी' (डीप इकोलॉजी) एक ऐसा क्रांतिकारी दृष्टिकोण है जो मानता है कि प्रकृति में मौजूद प्रत्येक तत्त्व (सजीव और निर्जीव) का अपना एक आंतरिक और स्वतंत्र मूल्य है, और मनुष्य प्रकृति से पृथक या श्रेष्ठ कोई सत्ता नहीं है (बिस्वास और प्रकाश, 2022)। सांख्य दर्शन के गहन अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि इस आधुनिक सिद्धांत के बीज सांख्य मीमांसा में अत्यंत स्पष्ट रूप से पहले से ही विद्यमान हैं (तिमलसिना, 2022)।

विभिन्न अकादमिक अध्ययनों से यह सिद्ध होता है कि सांख्य का उद्भव और विकास मानव की प्रकृति में 'अंतर्निहितता' (एम्बेडेडनेस) को पुष्ट करता है (बिस्वास और प्रकाश, 2022)। सांख्य विकासवाद के अनुसार, मनुष्य का शारीरिक और मानसिक ढाँचा (बुद्धि, अहंकार, मन) और बाह्य पर्यावरण (पंचमहाभूत) एक ही मूल तत्त्व—प्रकृति के विभिन्न परिणाम मात्र हैं (मिश्र, 1940)। चूँकि मनुष्य का शरीर और प्राकृतिक पर्यावरण एक ही त्रिगुणात्मक द्रव्य से निर्मित हैं, इसलिए गहन पारिस्थितिकी का यह विचार कि "पर्यावरण को हानि पहुँचाना स्वयं को हानि पहुँचाना है," सांख्य दर्शन में 'त्रिविध दुःख' (आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविक) के निवारण के रूप में पहले ही उपस्थित है (ईश्वरकृष्ण, 2023)। प्राकृतिक असंतुलन आधिभौतिक और आधिदैविक दुःखों का प्रमुख कारण बनता है, जिससे मुक्ति के लिए प्रकृति के साथ सामंजस्यपूर्ण व्यवहार नितांत अनिवार्य है (अमेटा, 2025)।

(घ) सांख्यकारिका के विशिष्ट श्लोकों में पर्यावरणीय चेतना और प्रकृति की निःस्वार्थता : ईश्वरकृष्ण की प्रामाणिक रचना 'सांख्यकारिका' में प्रकृति के स्वरूप और उसके निःस्वार्थ कर्म का जो सजीव और काव्यात्मक चित्रण

प्रस्तुत किया गया है, वह पर्यावरण-नैतिकता का सर्वोत्कृष्ट दार्शनिक उदाहरण है (ईश्वरकृष्ण, 2023)। कारिका 56 से 60 के मध्य प्रकृति के परोपकारी स्वभाव का अत्यंत मार्मिक और दार्शनिक विश्लेषण किया गया है, जो सीधे तौर पर आज के पारिस्थितिक विमर्श से जुड़ता है (मिश्र, 1940)। सांख्यकारिका की कारिका 60 में स्पष्ट रूप से उल्लेखित है कि "प्रकृति अत्यंत उदार (उपकारिणी) है और वह बिना किसी स्वार्थ या प्रतिफल की अपेक्षा (अपार्थकं) के, अनुपकारी (स्वयं में स्थिर) पुरुष के लिए कार्य करती है" (ईश्वरकृष्ण, 2023)। प्रकृति एक निपुण नर्तकी के समान है, जो पुरुष के अनुभव (भोग) और अंततः उसके मोक्ष (कैवल्य) के लिए अपने सम्पूर्ण ऐश्वर्य का प्रदर्शन करती है और जब पुरुष को विवेकज्ञान प्राप्त हो जाता है, तो वह निवृत्त हो जाती है (मिश्र, 1940)। यह तात्त्विक अवधारणा आधुनिक मनुष्य के लिए एक प्रखर नैतिक संदेश है—प्रकृति जो स्वयं बिना किसी स्वार्थ के मनुष्य का भरण-पोषण करती है, उसके प्रति कृतघ्न होना और उसका विनाश करना मानव जाति का सबसे बड़ा नैतिक पतन है (बघेल, 2019)। इसी प्रकार, कारिका 15 और 18 में प्रकृति के व्यक्त और अव्यक्त स्वरूप तथा कारण-कार्य श्रृंखला (सत्कार्यवाद) का विशद वर्णन किया गया है, जो आधुनिक पारिस्थितिक तंत्र की जटिल अंतर्संबंधता को एक सुदृढ़ वैज्ञानिक और दार्शनिक आधार प्रदान करता है (भट्टाचार्य, 2023)।

(ङ) पारिस्थितिक नारीवाद (इकोफेमिनिज़्म) में पुरुष-प्रकृति की पुनर्व्याख्या : पर्यावरण संरक्षण और वैचारिक विमर्श में वंदना शिवा की बहुचर्चित कृति *'स्टेयिंग अलाइव: विमेन, इकोलॉजी एंड सर्वाइवल इन इंडिया' (1988)* सांख्य दर्शन की शाश्वत अवधारणाओं को समकालीन पारिस्थितिक नारीवाद से बड़ी ही सहज़ता से जोड़ती है (शिवा, 1988)। वंदना शिवा के अनुसार, प्रकृति को केवल एक भौतिक संसाधन या मृत द्रव्य मानना पश्चिमी पुरुषसत्तात्मक और न्यूनीकरणवादी (रिडक्शनिस्ट) मानसिकता की उपज है (शिवा, 1988)। वे सांख्य दर्शन का सीधा संदर्भ देते हुए लिखती हैं कि "प्रकृति समस्त सजीव और निर्जीव की जननी है; वह ब्रह्मांड की स्त्री एवं रचनात्मक शक्ति की साक्षात अभिव्यक्ति है, जो पुरुष (चेतना) के साथ मिलकर इस अनंत सृष्टि का निर्माण करती है" (शिवा, 1988)।

जब आधुनिक समाज इस पुरुष-प्रकृति के संतुलित और पूरक द्वैत को भूल जाता है और 'पुरुष' (यहाँ पश्चिमी संदर्भ में सत्ता और वर्चस्व) 'प्रकृति' पर अपना क्रूर आधिपत्य स्थापित करने का प्रयास करता है, तब न केवल पर्यावरण का विनाश होता है, बल्कि समाज में स्त्री और हाशिए के वर्गों का भी समान रूप से शोषण प्रारंभ हो जाता है (शिवा, 1988)। सांख्य दर्शन स्पष्ट करता है कि पुरुष 'भोक्ता' या 'विनाशक' नहीं है, वह केवल एक 'द्रष्टा' है (मिश्र, 1940)। अतः, पर्यावरण-नैतिकता की यह परम मांग है कि हम प्रकृति के इस रचनात्मक और मातृ-स्वरूपी आयाम का सम्मान करें और विकास के नाम पर चल रहे हिंसक एवं प्रकृति-विरोधी औद्योगिकीकरण पर लगाम लगाएँ (दवे, 2025)।

(च) साहित्यिक सन्दर्भों में प्रकृति और पुरुष का द्वैत एवं पर्यावरणीय दर्शन : साहित्य सदैव समाज, दर्शन और मानवीय संवेदनाओं का सच्चा दर्पण होता है। हिंदी साहित्य में प्रकृति और पुरुष के दार्शनिक संबंधों को कई उपन्यासों और काव्यों में बड़ी सूक्ष्मता और गहराई से उकेरा गया है (शाह, 1978)। इस संदर्भ में प्रख्यात साहित्यकार रमेशचन्द्र शाह का प्रतिष्ठित उपन्यास 'गोबरगणेश' (1978) एक अद्वितीय रचना है, जो सांख्य की दार्शनिक अंतर्दृष्टि को एक औपन्यासिक आख्यान में पिरोती है (शाह, 1978)।

रमेशचन्द्र शाह के 'गोबरगणेश' में नायक विनायक का सम्पूर्ण जीवन और उसका मनोवैज्ञानिक अंतर्द्वंद्व पूर्णतः प्रकृति, नियति और दार्शनिक संस्कारों की पृष्ठभूमि पर विकसित होता है (शाह, 1978)। उपन्यास का प्रथम खंड 'अन्नजल' कुमाऊँ की रहस्यमयी और विराट पहाड़ी प्रकृति के मध्य आकार लेता है। विनायक के बचपन और किशोर जीवन पर प्रकृति की अगाध संवेदनशीलता का प्रभाव उसके चरित्र को 'सात्त्विक' और 'दार्शनिक' बनाता है (शाह, 1978)। लेखक ने अत्यंत कलात्मक ढंग से यह दर्शाया है कि किस प्रकार मनुष्य का मन (सांख्य के अनुसार जो स्वयं प्रकृति का ही एक सूक्ष्म परिणाम है) बाह्य पर्यावरण (पंचमहाभूतों) के साथ अंतर्क्रिया कर उदात्त संवेदनाओं का

सृजन करता है (शाह, 1978)। विनायक के पिता का अगाध आदर्शवाद और कला-प्रेम (सात्त्विक गुण) तथा मथुर काका की घोर दुनियादारी व व्यावहारिकता (राजसिक प्रवृत्ति) के मध्य का अनवरत संघर्ष सांख्य के त्रिगुणों के व्यावहारिक द्वंद्व का ही साहित्यिक रुपान्तरण प्रतीत होता है (शाह, 1978)। यह उपन्यास इस अकाट्य तथ्य को रेखांकित करता है कि जब मनुष्य अपनी मूल जड़ों (प्रकृति) से जुड़कर अपनी नियति का सामना करता है, तभी उसके भीतर सच्चा विवेक उत्पन्न होता है।

इसी प्रकार, नोबेल पुरस्कार विजेता रवीन्द्रनाथ टैगोर के विस्तृत साहित्य में प्रकृति और मनुष्य के अद्वैत और सह-अस्तित्व की भावना प्रबल रूप से दिखाई देती है (टैगोर, 2014)। टैगोर के वन-दर्शन का उल्लेख करते हुए आधुनिक विचारक यह मानते हैं कि "वन में कोई भी प्रजाति दूसरी प्रजाति के हिस्से का अतिक्रमण नहीं करती; प्रत्येक प्रजाति दूसरों के साथ सहयोग करके अपना भरण-पोषण करती है" (टैगोर, 2014)। टैगोर का यह दार्शनिक विचार सांख्य के 'अहिंसा' और 'प्रकृति के स्वतः संतुलन' के सिद्धांत का ही साहित्यिक विस्तार है (रविकांत, 2021)। इसके अतिरिक्त, सुमित्रानंदन पंत की प्रसिद्ध काव्य रचना 'स्वर्णधूलि' (1947) और 'चिदंबरा' में भी प्रकृति को केवल एक जड़ दृश्य के रूप में नहीं, बल्कि एक चेतन और संवेदनक्षम सत्ता के रूप में चित्रित किया गया है, जो पुरुष के साथ एकाकार होने के लिए आतुर है (पंत, 1947)।

डॉ0 सर्वपल्ली राधाकृष्णन भी भारतीय दर्शन की इस समग्रता पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं कि उपनिषदों और सांख्य में आत्मा (पुरुष) और प्रकृति का जो संबंध वर्णित है, वह केवल बौद्धिक या सैद्धांतिक विमर्श नहीं है, बल्कि यह एक अनुभूत सत्य है (राधाकृष्णन, 1987)। राधाकृष्णन के अनुसार, "यह भ्रांति (अविद्या) ही है जो मनुष्य को यह सोचने पर विवश करती है कि वह प्रकृति या अन्य जीवों से सर्वथा भिन्न और श्रेष्ठ है" (राधाकृष्णन, 1987)। सांख्य का 'विवेकज्ञान' इसी गहन भ्रांति का निवारण कर मनुष्य को यह पारदर्शी दृष्टि प्रदान करता है कि संपूर्ण पारिस्थितिक तंत्र और मानव चेतना एक ही विराट सत्य के अविभाज्य अंग हैं (तिमलसिना, 2022)।

(3) परिणाम : उपर्युक्त विस्तृत दार्शनिक चर्चा, श्लोकों के विश्लेषण और साहित्यिक सन्दर्भों के मूल्यांकन से यह अकाट्य परिणाम प्राप्त होता है कि सांख्य दर्शन का 'पुरुष-प्रकृति द्वैत' कोई विभाजनकारी (डाइकोटोमस) या विखंडनकारी अवधारणा नहीं है, बल्कि यह एक अत्यंत पूरक और सह-अस्तित्वात्मक (सिम्बायोटिक) प्रणाली की वैज्ञानिक व्याख्या है (बघेल, 2019)।

पहला महत्वपूर्ण परिणाम यह है कि सांख्य दर्शन आधुनिक 'मानव-केंद्रित' (एंथ्रोपोसेंट्रिक) दृष्टिकोण को पूर्णतः खारिज करता है (बिस्वास और प्रकाश, 2022)। अज्ञान और अहंकार—जो मनुष्य को पर्यावरण का अनियंत्रित उपभोग करने के लिए प्रेरित करते हैं—सांख्य के अनुसार वे समस्त दुःखों और जन्म-मरण के 'बंधन' के मूल कारण हैं (ईश्वरकृष्ण, 2023)। इसके विपरीत, प्रकृति को एक व्यवस्थित, पवित्र और जीवंत तंत्र मानकर जब मानव व्यवहार करता है, तो समाज में पारिस्थितिक संतुलन स्वतः स्थापित हो जाता है (श्रोत्रिय, 2025)।

दूसरा उल्लेखनीय परिणाम त्रिगुण सिद्धांत की पर्यावरणीय उपादेयता से संबंधित है (अमेटा, 2025)। आधुनिक 'सतत विकास' (सस्टेनेबल डेवलपमेंट) का वैश्विक लक्ष्य तभी प्राप्त किया जा सकता है जब समाज 'रजस' (अंधाधुंध भौतिक विकास और लालच) और 'तमस' (पर्यावरण के प्रति अज्ञानता और उदासीनता) पर कड़ा नियंत्रण स्थापित करे और 'सत्त्व' (जागरूकता, संयम, दया और विवेक) का सामूहिक विकास करे (बघेल, 2019) ।

तीसरा और अंतिम परिणाम यह स्पष्ट करता है कि वंदना शिवा का पारिस्थितिक नारीवाद और रमेशचन्द्र शाह जैसे रचनाकारों के उपन्यासों में वर्णित मानवीय चेतना का प्राकृतिक विकास, सांख्य दर्शन के उसी मूल तत्वज्ञान को पुष्ट करते हैं जहाँ प्रकृति एक मातृ-स्वरूपी, निःस्वार्थ और परम कल्याणकारी सत्ता है (शिवा, 1988)। सांख्य के अनुसार, इस अनंत प्रकृति का सम्मान और संरक्षण स्वयं मानव चेतना (पुरुष) के अस्तित्व को बचाए रखने के लिए नितांत अपरिहार्य है (शाह, 1978)।

(4) निष्कर्ष : निष्कर्षरूप में कहा जा सकता है कि आधुनिक विश्व का पर्यावरणीय संकट मात्र एक भौतिक समस्या नहीं है, बल्कि यह उससे कहीं अधिक एक आध्यात्मिक और नैतिक संकट है (दवे, 2025)। जब तक मनुष्य प्रकृति को केवल एक जड़ पदार्थ या 'संसाधन' मात्र समझेगा, तब तक किसी भी वैज्ञानिक, तकनीकी या नीतिगत उपाय से इस संकट का स्थायी समाधान संभव नहीं है (रविकांत, 2021)। भारतीय ज्ञान परंपरा में सांख्य दर्शन की 'पुरुष और प्रकृति' की विशद अवधारणा समकालीन पर्यावरण-नैतिकता के लिए एक अत्यंत समृद्ध, तार्किक और सुदृढ़ आधार प्रस्तुत करती है (अमेटा, 2025)।

सांख्य का अमोघ विवेकज्ञान हमें यह सिखाता है कि हम इस विशाल सृष्टि के निरंकुश स्वामी नहीं हैं, बल्कि एक तटस्थ और सचेत 'द्रष्टा' तथा इस ब्रह्मांडीय व्यवस्था के एक छोटे से 'सहभागी' मात्र हैं (राधाकृष्णन, 1987)। ईश्वरकृष्ण की 'सांख्यकारिका' में वर्णित प्रकृति का वह निःस्वार्थ और परमार्थिक रूप—जो निरंतर बिना किसी प्रतिफल की अपेक्षा के पुरुष के मोक्ष और कल्याण के लिए कार्य कर रही है—मनुष्य से यह सर्वोच्च नैतिक अपेक्षा करता है कि वह अपनी कृतघ्नता का तुरंत त्याग करे और प्रकृति के संरक्षण के प्रति अपने पुनीत दायित्व का निर्वहन करे (ईश्वरकृष्ण, 2023)। साहित्यकारों, दार्शनिकों और आधुनिक पर्यावरणविदों ने सांख्य के इसी वैचारिक अर्क को अपने-अपने परिप्रेक्ष्य में उद्घाटित कर समाज को सचेत किया है (शाह, 1978)। अंततः, यदि मानवता को पृथ्वी पर अपना सुरक्षित अस्तित्व बनाए रखना है और भविष्य की विनाशकारी प्राकृतिक आपदाओं (आधिदैविक दुःखों) से स्वयं को बचाना है, तो उसे सांख्य दर्शन द्वारा निर्देशित संयम, संतुलन और सह-अस्तित्व के सात्त्विक मार्ग का अनिवार्य रूप से अनुसरण करना ही होगा (तिमलसिना, 2022)। प्रकृति और मनुष्य का यह पारस्परिकतापूर्ण तादात्म्य ही भविष्य के सुरक्षित, संतुलित और हरित विश्व की एकमात्र कुंजी है (बिस्वास और प्रकाश, 2022)।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. अमेटा, गुणबाला. "इंडियन नॉलेज ट्रेडिशन एंड सस्टेनेबिलिटी." *आईजेसीआरटी*, खंड 13, अंक 1, 2025, पृ. 15-20.
2. ईश्वरकृष्ण. *सांख्यकारिका*. अनुवादक रामशंकर भट्टाचार्य, मोतीलाल बनारसीदास, 2023.
3. टैगोर, रवीन्द्रनाथ. *रवीन्द्र रचनावली*. विश्व भारती प्रकाशन, 2014.
4. तिमलसिना, स्थानेश्वर. "चेंज: थिंकिंग थ्रू सांख्य." *रिलिजंस*, खंड 13, अंक 6, 2022, पृ. 549.
5. नेस, अर्ने."द शैलो एंड द डीप, लॉन्ग रेंज इकोलॉजी मूवमेंट: ए समरी."*इन्क्वायरी*, खंड 16, अंक 1, 1973, पृ. 15-20.
6. दवे, कश्मीरा. "एनवायर्नमेंटल एथिक्स इन हिंदू स्क्रिप्चर्स." *रिसर्चगेट जर्नल*, 2025, पृ. 24-30.
7. पंत, सुमित्रानंदन. *स्वर्णधूलि*. राजकमल प्रकाशन, 1947.
8. बघेल, ऋचा. "पुरुष प्रकृति डुअलिटी एंड एनवायर्नमेंटल एथिक्स." *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ हेल्थ प्रोफेशन्स*, खंड 6, अंक 1, 2019, पृ. 12-18.
9. बिस्वास, नंदा गोपाल, और ज्ञान प्रकाश. "सांख्य फिलॉसफी, डीप इकोलॉजी एंड सस्टेनेबल डेवलपमेंट." *प्रोब्लेमी एकोरोजवोज*, खंड 17, अंक 1, 2022, पृ. 288-292.
10. भट्टाचार्य, रामशंकर. *सांख्य दर्शन की रूपरेखा*. इंडोलॉजिकल हाउस, 2023.
11. मिश्र, वाचस्पति. *सांख्य तत्व कौमुदी*. निर्णय सागर प्रेस, 1940.
12. रविकांत, जी. "इंडियन फिलॉसफी एंड एनवायर्नमेंटल एथिक्स." *ग्रोसी जर्नल*, खंड 4, अंक 1, 2021, पृ. 47-63.
13. राधाकृष्णन, सर्वपल्ली. *अ सोर्सबुक इन इंडियन फिलॉसफी*. प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस, 1987.
14. रेणुकादेवी, के. "इकोलॉजिकल इनसाइट्स इन इंडियन फिलॉसफी." *जर्नल ऑफ ह्यूमन वैल्यूज*, खंड 18, अंक 1, 2012, पृ. 23-34.
15. शाह, रमेशचन्द्र. *गोबरगणेश*. राजकमल प्रकाशन, 1978.
16. शिवा, वंदना. *स्टेयिंग अलाइव: विमेन, इकोलॉजी एंड सर्वाइवल इन इंडिया*. काली फॉर विमेन, 1988.
17. श्रोत्रिय, प्रणव देवेन्द्र. "भारतीय ज्ञान परंपरा में पर्यावरण का महत्व." *इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इनोवेशन*, खंड 12, अंक 4, 2025, पृ. 20-24.